# संगति

## भाग – ७

**इस श्रंखला के पिछले भागों मे निम्नलिखित प्रकार की 'संगति' पर विचार किया जा चुका है —**

१. 'शारीरिक' संगति
२ 'मानसिक' संगति
३ 'व्यक्तित्व' की संगति
४. 'मृत्तकों' की संगति
५. 'प्रकृति' की संगति
६ 'वचनों' की संगति
७ 'निगाह' की संगति

इस लेख में कुछ अन्य प्रकार की संगति की बाबत विचार की जाती है —

**८. 'लिखित रचनाओं' की संगति :—**

हमारे रव्यालों, भावनाओं तथा मनोभावों को प्रकट करने के साधनों में **लेखन** एक उत्तम तथा कारगर **साधन** है ।

**'वचन'** अथवा **'बोली' द्वारा** प्रकट किये हुए रव्यालों अथवा भावनाओं का श्रोताओं पर बहुत **थोड़े समय के लिए** प्रभाव रहता है, जो शीध्र ही **समाप्त हो** जाता है । परन्तु **'लिखित' रूप में व्यक्त किये हुए रव्याल अथवा भावनाँए अनन्त समय तक संभाल कर रखी जा सकती है तथा भावी पीढ़ियों के लिए भी बहुमूल्य खजाना बनता है ।**

यद्यपि यह **'लेखन'** कागज-कलम या प्रिंटिंग प्रैस के माध्यम से संभाल कर रखा जाता है — परन्तु इन **स्थूल दृष्टमान शब्दों के पीछे 'लेखक' की भावनाँए, सूक्ष्म मनोभावों के कटाक्ष तथा श्रद्धा भाव की 'प्रेम-स्वैपना' सदैव उसी प्रकार झलकती रहती है ।**

कई सदियों बाद भी जब इन रचनाओं को पढ़ते तथा विचार करते हैं, तो **लेखक** की अति सूक्ष्म, गहरी, तीक्ष्ण **भावनाओं व मनोभावों का हमारे मन पर 'जादू' सा असर होता है ।**

इसीलिए 'गुरबाणी' तथा अन्य अवतारों की 'बाणियां सदियों बाद भी, उसी प्रकार **ताजी, जीवन्त, प्रभावशाली होती हैं** तथा हमारे जन्म-जन्म से सोये हुए सूक्ष्म मनोभावों तथा श्रद्धा-भावों को **पुनः जगाने में जादू का काम करती हैं।**

इन 'ईश्वरीय' बाणीयों अथवा संत-भक्तों की 'रचनाओं' को पढ़ कर, **विचार कर,** हमारा मन किसी आत्मिक र**स तथा प्रेम स्वैपना के हिलोर की मस्ती अनुभव करता है ।**

हउ वारी जीउ वारी पड़ि बुझि मंनि वसावणिआ ॥
गुरमुखि पड़हि हरि नामु सलाहहि दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ (पृ १२७)
राम पड़हु मनि करहु बीचारु ॥
गुरपरसादी मैलु उतारु ॥ (पृ २३०)
अंदरि लाल जवेहरी गुरमुखि हरि नामु पडु ॥ (पृ ९५२)
गुर परसादी विदिआ वीचारै पड़ि पड़ि पावै मानु ॥
आपा मधे आपु परगासिआ पाइआ अम्रितु नामु ॥ (पृ १३ २९)

दूसरी ओर, यदि लेखक **मायिकी रंगत की तीव्र तथा तीक्ष्ण भावनाओ से** कोई 'रचना' लिखता है, तब उस का भी सांसारिक मनों पर अति गहरा तथा **तीव्र प्रभाव पड़ता है ।**

इस कलयुगी समय में **ऐसी मायिकी रंगत अथवा तुच्छ मनोभावों वाला बेशुमार** 'साहित्य' छपा हुआ है, जिसे पढ़ कर संसार के जीव **मायिकी रंगत के तुच्छ ख्यालों तथा मनोभाव के प्रवाह में सहज-स्वभाव बहते जा रहे है।**

तीनि भवन महि एका माइआ ॥
**मूरखि पड़ि पड़ि दूजा भाउ द्रिड़ाइआ ॥** (पृ ४२४)

कहावत है कि किसी व्यक्ति का **'आचरण' जाँचने के लिए** किसी को पूछने की आवश्यकता नहीं — उस के **तकिये तले पड़ी किताबें देख लो । उन पुस्तकों से प्रकट हो जायेगा कि उस की 'रुचि' या मन की 'रंगत' कैसी है ।**

यदि कोई किताब **दूसरी बार पढ़ी जाये,** तब पक्का निश्चय हो जाता है कि उस व्यक्ति का 'आचरण' **किताब के ख्यालों या भावनाओं की 'रंगत' वाला है,** चाहे बाहर से वह कैसा भी बनता फिरे!

इसी प्रकार कौमों, समुदायों, देशों तथा विश्व के आचरण व **नैतिकता की बाबत परख की जा सकती है ।** जिस कौम, समुदाय अथवा देश में जैसा साहित्य

**अधिक पढ़ा जाये, अथवा उन की रुचि जिस साहित्य को पढ़नें की हो तथा जिस प्रकार का साहित्य बहुत 'प्रचलित' हो** — उस कौम-समुदाय या देश का आचरण व **नैतिकता भी वैसी ही होती है ।**

दूसरे शब्दों में साहित्य ही जीव, समुदाय, देश तथा विश्व के **आचरण तथा जीवन की कद्र-कीमत को परखने की कसौटी है ।**

वर्तमान समय में समुदायों, देशों तथा विश्व में मलिन, तुच्छ वाशनाओं की रंगत वाले साहित्य के लिए **प्रबल रुचि है** — जिस कारण सारे विश्व की मानसिक अवस्था तथा नैतिकता **गिरावट की ओर बहती जा रही है** तथा उत्तम दैवीय मार्ग-दर्शन देने वाले साहित्य के लिए **रुचि अथवा माँग कम होती जा रही है।**

माँग तथा पूर्ति (demand and supply) के नियम अनुसार जैसी **'रुचि' अथवा 'माँग'** होती है, वैसा ही साहित्य लिखवा जाता है । इस लिए **लेखकों** को मजबूर हो कर **जनता की 'रुचि' अनुसार ही साहित्य लिखना पड़ता है** । इसी कारण वर्तमान **साहित्यकारों की मानसिक रंगत भी मायिकी मलिन वाशनाओं वाली होती जा रही है ।**

यदि कोई गुरमुख उत्तम-पावन आत्मिक लेखनियाँ लिखता भी है, तब प्रकाशक (publisher) उन्हें छापने के लिए तैयार नहीं होते, क्योंकि इन की माँग बाजार में बहुत कम होती है, जिस कारण उन की पूंजी रुक (block) जाती है ।

इस प्रकार **किताबों या ग्रन्थों** को पढ़ना, सुनना, गाना, विचार करना, प्रभाव लेना ही, हमारे मन का **'लिखित' रचनाओं' से 'संगति' या 'कुसंगति' करनी है, जिस का प्रभाव अति गहरा, तीव्र, तीक्ष्ण तथा शक्तिमान होता है ।**

इन **'लिखित रचनाओं' की संगति'** घर बैठे भी हो सकती है तथा इन का **'प्रभाव' भी देर तक रहता है ।**

उत्तम आत्मिक **'ग्रन्थों' तथा गुरबाणी की 'संगति' करने से अत्यन्त आत्मिक लाभ प्राप्त होते हैं ।**

परन्तु अत्यन्त दुख की बात है कि किताबों की दुकानों पर 'नावल' तथा अनेक **राजसी व तामसिक रंगत भरी** किताबों तथा अखबारों **की भरमार है** जिन्हें साधारण जनता बहुत शौक व रुचि से खरीदती तथा पढ़ती है ।

इसके **विपरीत** — गुरमुख प्यारों, भक्तों, संतों जैसे — भाई गुरदास जी, डा० भाई वीर सिंह जी तथा प्रो०पूरन सिंह आदि की उत्तम दैवीय रचनाओं के **गाहक गिनेचुने ही होते है** तथा इन लिखित रचनाओं से पूर्ण आत्मिक लाभ ले कर सही आत्मिक दिशा अपनाने वाले उस से भी **कम होते हैं ।**

वेदु पड़हि हरि रसु नही आइआ ।। वादु वरवाणहि मोहे माइआ ।।
अगिआनमती सदा अधिआरा गुरमुखि बूझि हरि गावणिआ ।। (पृ १२८)
पड़िआ बूझै सो परवाणु ।।
जिसु सिरि दरगह का नीसाणु ।। (पृ ६६२)
सिम्रिति सासत्र पड़हि पुराणा ।।
वादु वरवाणहि ततु न जाणा ।। (पृ १०३२)
सिम्रिति सासत्र बहुतु बिसथारा ।। माइआ मोहु पसरिआ पासारा ।।
मूरख पड़हि सबदुं न बूझहि गुरमुखि विरलै जाता हे ।। (पृ १०५३)
बेद पुरान पड़े का किआ गुनु खर चंदन जस भारा ।।
राम नाम की गति नही जानी कैसे उतरसि पारा ।। (पृ ११०२-३)
गावनि पड़नि बिचारि बहु कोटि मधे विरला गति पावै। (वा०भा०गु०१/८)

इसी लिए 'जीवन' को उत्तम **'आत्मिक दिशा'** देने के लिए उच्च तथा **दैवीय भावनाओं से भरे साहित्य** (sublime literature) को लिखने की महत्ता तथा प्रेरणा की गयी है ।

भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ।।
लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु ।। (पृ १६)
हसत पुनीत होहि ततकाल ।। बिनसि जाहि माइआ जंजाल ।।
रसना रमहु राम गुण नीत ।। सुखु पावहु मेरे भाई मीत ।।
लिखु लेखणि कागदि मसवाणी ।।
राम नाम हरि अम्रित बाणी ।। (पृ १८५)
हरि जसु लिखहि लाइ भावनी से हसत पविता ।। (पृ ३२२)
हरि जसु लिखहि बेअंत सोहहि से हथा ।। (पृ ७०९)
गुन गाइ सुनि लिखि देइ ।। सो सरब फल हरि लेइ ।।
कुल समूह करत उधारु ।। संसारु उतरसि पारि ।। (पृ ८३८)
सुणि पाडे किआ लिखहु जंजाला ।।
लिखु राम नाम गुरमुखि गोपाला ।। (पृ ९३०)
धंनु सु कागदु कलम धंनु धनु भांडा धनु मसु ।।
धनु लेखारी नानका जिनि नामु लिखाइआ सचु ।। (पृ १२९१)

दूसरी ओर तुच्छ मायिकी रंगत वाले साहित्य **'लिखने'** के विषय में गुरबाणी यूँ ताड़ना करती है —

कलम जलउ सणु मसवाणीऐ कागदु भी जलि जाउ।।
लिखण वाला जलि बलउ जिनि लिखिआ दूजा भाउ ।। (पृ. ८४)

लिखदिआ लिखदिआ कागद मसु खोई ।।
दूजै भाइ सुखु पाए न कोई ।।
कूड़ु लिखहि तै कूड़ु कमावहि ।।
जलि जावहि कूड़ि चितु लावणिआ ।। (पृ. १२३)

निम्न रुचियों वाली **रचनाओं की कुसंगति द्वारा** हमारे मन पर **अत्यन्त मैला हानिकारक प्रभाव पड़ता है,** जो कई **जन्मों तक हमारे साथ रहता है ।**

तुच्छ रुचि वाली **रचनाएं या किताबें पढ़ कर** हमारा मन इतना मलिन तथा कठोर हो जाता है कि हमें उच्च दैवीय रचनाओं या गुरबाणी को **पढ़ने अथवा विचार करने की रुचि ही नहीं उत्पन्न होती ।**

होरु कूड़ु पड़णा कूड़ु बोलणा माइआ नालि पिआरु ।।
नानक विणु नावै को थिरु नही पड़ि पड़ि होइ खुआरु ।। (पृ. ८४)

दूजै भाइ पड़ै नही बूझै ।।
त्रिबिधि माइआ कारणि लूझै ।। (पृ. १२७)

त्रै गुण पड़हि हरि ततु न जाणहि ।।
मूलहु भूले गुर सबदु न पछाणहि ।। (पृ. १२८)

रीरी लली पाप कमाणे पड़ि अवगण गुण वीसरिआ ।।
मन ऐसा लेखा तूं की पड़िआ ।। (पृ. ४३४)

मूरख दुबिधा पढ़हि मूलु न पछाणहि बिरथा जनमु गवाइआ ।। (पृ. ११३३)

गुरबाणी में हमें 'हरिगुण' तथा **'हरि कथा' पढ़ कर उत्तम संगति करने की प्रेरणा की गई है ।**

हरि गुण पड़ीऐ हरि गुण गुणीऐ ।।
हरि हरि नाम कथा नित सुणीऐ ।। (पृ. ९५)

गुरमुखि हरि पड़ीऐ गुरमुखि हरि सुणीऐ
हरि जपत सुणत दुखु जाइ जीउ ।। (पृ. ४४४)

हरि पड़ु हरि लिखु हरि जपि हरि गाउ
हरि भउजलु पारि उतारी ।। (पृ. ६६९)

हरि पड़णा हरि बुझणा हरि सिउ रखहु पिआरु ।। (पृ ९३७)

हरि पड़ीऐ हरि बुझीऐ गुरमती नामि उधारा ।।
गुरि पूरै पूरी मति है पूरै सबदि बीचारा ।। (पृ १००९)

हरि सालाहे हरि पड़ै गुर कै सबदि वीचारि ।। (पृ १०९३-९४)

**१. ख्यालों की संगति : —**

जिस प्रकार रेडियो या T.V. स्टेशन से **अदृष्ट 'वामनिक चुंबकीय' तंरगें** (electromagnetic waves) उत्पन्न होती हैं — उसी प्रकार हमारे **'मन' में से भी लगातार 'अदृष्ट लहरें' उत्पन्न होती रहती हैं ।**

मन के बहु-रंगी ख्यालों, चिंतन, संकल्प, विकल्प, मनोभाव, भावनाओं, वाशनाओं को ही 'लहरें' या 'तंरगें' **कहा गया है ।**

ऐसे 'ख्याल' या 'मनोभाव' हमारे मन में से **स्वतः सहज स्वभाव उत्पन्न होते रहते हैं ।**

यदि किसी 'जीव' या 'वस्तु' में हमें **रुचि न हो,** तब उस का हल्का सा ख्याल हमारे **मन के ऊपर से ही गुजर जाता है** । हमारा मन उन **'दृश्यों' की 'पकड़' या 'संगति' नहीं करता ।**

उदाहरण स्वरूप बाजार से गुजरते हुएं, अनेक व्यक्ति, वस्तुँए तथा 'दृश्य' दिखायी देते हैं — जिन में से हमें वही व्यक्ति, वस्तुँए या 'दृश्य' याद रहते हैं, **जिन में हमें रुचि हो,** शेष सब **उसी वक्त भूल जाते हैं ।** हमें **वही वस्तुँए आकर्षित करती हैं,** जिनमें हमें 'दिलचस्पी' हो । हमारा मन उन मन-भावन वस्तुओ को **'ग्रहण' कर लेता है** तथा **बार-बार याद कर के 'संग' करता है ।**

इस प्रकार हम अपनी दिलचस्पी वाली **वस्तुओं से —**

'आकर्षित' होते हैं
'ग्रहण' करते हैं
बार-बार याद करते हैं
'संग' करते हैं
'अभ्यास' करते हैं
'प्रभाव' लेते हैं
'रंगत' लेते हैं
'स्वाद' लेते हैं ।

इसी प्रकार **बार बार याद करने से वे ख्याल या दृश्य हमारे अन्तर मन, बुद्धि चित्त के निचले तल में अथवा अन्तः करण में धंस, बस, रस कर समा जाते हैं ।**

**किसी 'ख्याल' या मनोभाव' को बार-बार याद करना ही उस ख्याल की 'संगति' करनी होती है तथा उस की 'रंगत' लेनी होती है । इस 'रंगत'** द्वारा ही हमारे मन पर **अच्छा या बुरा 'प्रभाव' पड़ता है ।**

यदि इन **ख्यालों की 'रंगत'** हमारे मन के गहरे तल अथवा **'अन्तःकरण** में धँस-बस-समा जाये तो **इस 'रंगत' को मिटाना कठिन है** । यदि हमारे मन तथा बुद्धि को **समझ भी आ जाये कि यह मानसिक 'रंगत' अति दुखदायी तथा हानिकारक है — तो भी 'अन्तःकरण' में दृढ़ हुई तथा रस रूप हुई 'रंगत'** खुद-ब-खुद **उभर आती है तथा जीव विवश हो कर अपने पुराने मलिन 'प्रवाह' में अचेत ही बह जाता है ।**

**मलिन तथा तुच्छ रंगत वाले ख्यालों की 'कुसंगति' से हमारे अन्दर तुच्छ मनोभाव तथा वाशनाँए अत्पन्न होती हैं, जैसे** शक, जलन, ईर्ष्या, द्वैत, नफरत, निंदा, झूठ, बेईमानी, स्वार्थ, गुटबन्दी, वैर, विरोध, टकराव, झगड़े, लड़ाईयाँ, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आदि ।

**इसके विपरीत यदि हमारे मन पर आत्म प्रकाश की दैवीय 'झलक' पड़** जाये, तब हमारे ख्याल तथा मनोभाव **'दैवीय' गुणों वाले हो जाते हैं,** जैसे दया, क्षमा, विनम्रता, परोपकार, निरअहंकार, सच्च, संतोष, सब्र, शान्ति, मैत्री भाव, सेवा भाव, हमदर्दी, प्यार, विशालता, भरोसा आदि ।

वास्तव में यह अनन्त **'सृष्टि',** अकाल पुरुष के 'कवाओ' अथवा 'हुकुम' का **'रूपमान-स्वरूप' है** । इस 'कवाओ' अथवा **ईश्वरीय मनोभाव के पीछे अनन्त आत्मिक शक्ति है जो अनेक रूपों-रंगों में रवि रही परिपूर्ण है ।**

निरन्तर अभ्यास द्वारा हमारे ख्यालों तथा मनोभावों को शक्ति मिलती है । इसी प्रकार बख्शे हुए गुरमुख प्यारे महापुरुषों के शक्तिमान 'ख्याल' या 'मनोभाव' भी रूपमान हो कर क्रियाशील होते हैं ।

ऐसे **शक्तिमान ख्यालों** से जब हमारा मन —

'मेल' करता है
'परसता' है
'संग' करता है
'प्रभाव' लेता है

'छुह' प्राप्त करता है

'आदान-प्रदान' करता है

तब हमारे मन पर **गहरा तथा तीक्ष्ण प्रभाव पड़ता है,** जो हमारे मन-चित्त के **निचले तल में उतर जाता है** तथा हमारे 'अस्तित्व' या **'व्यक्तित्व' को बदल देता है ।**

इस लिए गुरबाणी में हमें **कुसंगति** अथवा **तुच्छ 'मायिकी' 'संगति' से बचने की ताड़ना की गयी है —**

ओना पासि दुआसि न भिटीऐ जिन अंतरि क्रोधु चंडाल ।। (पृ ४०)

तिन्ह सगि संगु न कीचई नानक जिना आपणा सुआउ ।। (पृ ५२०)

मनमुख सेती दोसती थोड़ड़िआ दिन चारि ।।

इसु परीती तुटदी विलमु न होवई इतु दोसती चलनि विकार ।। (पृ ५८७)

साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ।। (पृ १३६९)

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि ।।

बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु ।। (पृ १३७१)

मनमुख सेती संगु करे मुहि कालख दागु लगाइ ।। (पृ १४१७)

दूसरी ओर **उत्तम दैवीय संगति की ताकीदी प्रेरणा की गयी है —**

सची संगति बैसणा सचि नामि मनु धीर ।। (पृ ६९)

साधू संगु करहु सभु कोइ ।।

सदा कलिआण फिरि दूखु न होइ ।। (पृ १९६)

थिति पावहु गोबिद भजहु संतह की सिख लेहु ।।

प्रीति करहु सद एक सिउ इआ साचा असनेहु ।। (पृ २५७)

ऊठत बैठत हरि भजहु साधू सगि परीति ।।

नानक दुरमति छुटि गई पारब्रहम बसे चीति ।। (पृ २९७)

तितु जाइ बहहु सतसंगती तिथै हरि का हरि नामु बिलोईऐ ।। (पृ ५८७)

इस विचार का निष्कर्ष यूँ निकाला जा सकता है —

१. दैवीय 'ख्याल' अथवा **'कवाओ'** द्वारा ही समस्त सृष्टि की रचना हुई है ।

कीता पसाउ एको कवाउ ।। तिस ते होए लख दरीआउ ।। (पृ ३)

२ दैवीय ख्याल अथवा **'हुकुम' अनुसार ही** इस सृष्टि का **'विराट-नाटक'** चल रहा है ।

तुधु आपे सिसटि सिरजीआ आपे फुनि गोई ।।
सभु इको सबदु वरतदा जो करे सु होई ।। (पृ. ६५४)

३ इस सृष्टि का अपना कोई **अस्तित्व नहीं** है । यह समस्त मायिकी मंडल — **'ख्यालों' का ही रूपमान स्वरूप है ।**

४. यह सृष्टि अस्थिर, क्षणभंगुर **'मिथ्या'** है ।

कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु ।। (पृ. ४६८)

५ ऐसे **'कूड़ संसार'** के साथ हमारा सम्बन्ध तथा व्यवहार भी कूड़ है, जिस की **'संगति'** में हम इतने गलतान हो गये हैं कि सृष्टि के **सृजनहार 'कर्ता' को भी भूल गये हैं ।**

**'कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु ।।'** (पृ. ४६८)

'पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।।' (पृ. १३३)

६ ईश्वरीय **'हुकुम'** अनुसार ही 'अहम् मयी' 'मैं-मेरी' तथा 'द्वैत भाव' उत्पन्न हुए हैं ।

'हउमै एहो हुकमु है पइऐ किरति फिराहि ।।' (पृ. ४६६)

७ मन की **'संगत'** अनुसार ही जीवों के अंदर वाशनाँए तथा मनोभाव उठते हैं तथा इनके प्रभाव में ही जीव —

सोचते
चिंतन करते
ख्याल करते
कर्म करते
बंधनों में पड़ते
परिणाम भोगते हैं ।

८ **'ख्यालों' की 'रंगत' अनुसार ही 'जीव' आपस में —**

व्यवहार करते हैं
प्रभाव देते हैं
प्रभाव लेते हैं
आदान प्रदान करते हैं
प्यार करते हैं

सेवा करते हैं

घृणा करते हैं

वैर-विरोध करते हैं

लड़ाईयाँ करते हैं ।

९. इन की **'रंगत'** अनुसार ही हमारे अंदर **अच्छे 'दैवीय गुण'** या **तुच्छ मलिन 'अवगुण' उत्पन्न होते हैं** ।

१०. इन **'गुणों' या 'अवगुणों'** अनुसार ही हमारा 'जीवन' **खुशहाल या दुखी होता है** ।

११. इन **अच्छे या बुरे 'ख्यालों को —**

बार-बार याद करने

दुहराने

अभ्यास करने

से ये ख्याल तीक्ष्ण, **तीव्र तथा दामनिक हो जाते हैं** ।

१२. ऐसे अभ्यास किये हुए **दामनिक 'ख्याल'** हमारे मन-चित्त-अन्तःकरण में **धँस-बस-समा कर, 'रूपमान' हो जाते हैं** तथा हमारे अंदर **'भूत-प्रेतों' की भाँति 'चिपके' रहते हैं** ।

१३.

'नजर लगनी'

वरदान देने

श्राप देने

आदान-प्रदान होना

नदरी नदरि निहाल होना (कृपादृष्टि)

इन अच्छे या बुरे **दामनिक ख्यालों का ही प्रकटाव हैं** ।

१४. मन के निचले तल अथवा **अन्तः करण में दृढ़ हुए ख्यालों या चिंतन की 'रंगत' अनुसार ही हमारा 'व्यक्तित्व' बनता है** ।

१५. जीव का आचरण, व्यवहार, आदतें, स्वभाव ही **'व्यक्तित्व' का प्रतीक है** जो हमारा **'जीवन-रूप'** ही हो जाता है ।

१६. यही **मानसिक 'रंगत'** अथवा व्यक्तित्व जीवन के **प्रत्येक पक्ष में अन्जाने, सहज स्वभाव तथा खुद-ब-खुद प्रकट होता रहता है** ।

१७. इस मानसिक **'रंगत' की तीव्रता या तीक्ष्णता अनुसार ही** हम एक दूसरे पर **'प्रभाव' डालते या प्रभाव ग्रहण करते हैं ।**

१८. प्रत्येक कल्पना या 'ख्याल' जब हमारे **मन से क्षण-पल के लिए छूता है, स्पर्श करता है, गुजरता है, 'संग' करता है,** तब वह **अपनी अच्छी या बुरी रंगत की हल्की सी अदृष्ट, अनजान सी 'आभा' या 'छुह' छोड़ जाता है ।** उसी एक ही **ख्याल को दूसरी तीसरी बार दुहराने से यह 'आभा' गाढ़ी होती जाती है तथा बार-बार अभ्यास करने से 'रंगत' बन जाती है** — जो प्रत्यक्ष रूप में **प्रकट होने लगती है ।**

१९. इस लिए **'ख्यालों' के 'छुहने'-'परसने' द्वारा ही** हमारा मन **'संगति' या 'कुसंगति'** करता है ।

२०. **एक ही 'रंगत' के ख्यालों** के लगातार चिंतन या अभ्यास से, यह 'रंगत' हमारे मन-चित-बुद्धि-अन्तः करण में **धँस-बस-समा कर दृढ़ होती जाती है ।**

२१. **इस दृढ़ हुई 'रंगत'** अनुसार ही **हमारा तन, मन, बुद्धि तथा आस-पास का वातावरण बनता है ।**

२२. ऐसी अच्छी या बुरी दृढ़ की हुई **मन की 'रंगत'** हमारी शरीरिक **मृत्यु के पश्चात भी 'नाश' नहीं होती,** अपितु **अगले जन्मों में जीव के साथ जाती है** — जिस का परिणाम हमें **अगले जन्मों में भी भोगना पड़ता है ।**

वास्तव में **'संगति' या ' कुसंगति' अनुसार ही हमारे मन पर अच्छी या बुरी 'रंगत' चढ़ती है** तथा इसी **'रंगत' अनुसार हम दुख-सुख भोगते हैं ।**

**जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ ।** (पृ १३६९)

संग सभाउ असाध साधु पापु पुंनु दुखु सुखु फलु पावै । **(वा०भा०गु० ३१/१३)**

'जीव' त्रिगुण मायिकी मंडल में विचरण करता है जिस कारण **हमारे ख्याल** सहज-स्वभाव **माया की मलिन तुच्छ रंगत वाले ही होते हैं ।**

इस लिए अपने जीवन को **उच्च-उत्तम, सुन्दर-सुहाना, सुखदायी, दैवीय तथा श्रेष्ठ बनाने के लिए, बख्शे हुए गुरमुख प्यारों की पवित्र-पावन दैवीय संगति' करनी अनिवार्य है ।**

खोजत खोजत सुनी इह सोइ ॥
साधसंगति बिनु तरिओ न कोइ ॥ (पृ ३७३)

सुभ चिंतन गोबिंद रमण निरमल साधू संग ।। (पृ ५२२)
संत सभा सुखु ऊपजै गुरमुखि नाम अधारु ।। (पृ ५८)
साजन संत मिलि नामु जपेहा ।।
सीतल साति सहज सुखु पाइआ ठाढि पाई प्रभि आपे जीउ ।। (पृ १०४)
तनु मनु मउलिआ राम सिउ सगि साध सहेलड़ीआह ।। (पृ १३५)
साधसगि भइओ जनमु परापति ।। (पृ १७६)
साधसंगति निहचउ है तरणा ।। (पृ १०७१)

१०. **अन्तः करण की संगति —**

पहले बताया जा चुका है कि जो **'ख्याल'** हमारे मन में **बार-बार दोहराये जाते हैं** — वे हमारे निचले मन में **'दृढ़'** होते जाते हैं। **लगातार अभ्यास द्वारा** ये दृढ़ हुए ख्याल हमारे **अन्तः करण में धँस, बस, रस रूप होकर 'समा' जाते हैं** तथा **शक्तिमान हो कर प्रबल 'अस्तित्व' या 'व्यक्तित्व' बन जाता है।**

जब हमारा मन बाहर के ऊपरी **रुझान से रिक्त होता है** या किसी बाहर की **उक्साहट की 'चिंगारी' लगती है,** तब **अन्तःकरण में धँसी, बसी, रस रूप हुई मानसिक 'रंगत' की 'भड़ास' या प्रतिबिम्ब** (reflection) **स्वतः बाहर की ओर उभर कर, हमारे मन पर अपना मलिन ग्लानिपूर्ण प्रभाव डालता है,** जिससे मन की मलिनता में और भी बढ़ोत्तरी होती है।

यद्यपि हमारा ऊपरी मन या बुद्धि ऐसी **तीव्र ग्लानि को महसूस भी करे** तथा इस से बचना भी चाहे, तो भी यह **स्वंय रची हुई ग्लानि का जहर**— 'आस्तीन के 'साँप' की भाँति' हमारे मन-तन-चित पर वार या **आक्रमण करता रहता है।** जिस से हमारा मन और भी व्यथित होता, जलता, भुनता, कुढ़ता, तपता तथा जहरीला **होता जाता है** तथा हमारा जीवन **नरक मयी बन जाता है।**

कहा जाता है कि **बाहर के शत्रु** से बचने के लिए तो कोई **उपाय हो** सकता है परन्तु अन्दर **'आस्तीन' में बसे 'शत्रु' से कोई बचाव नहीं हो सकता।** ऐसे आन्तरिक गुप्त, खुफिया, भेदी **'शत्रु' मौका ताड़ कर अचानक जोरदार हमला करते हैं,** जिस के प्रभाव से बचना **कठिन है** तथा जिस का वार गहरा व अत्यन्त दुखदायी होता है।

मन का सुभाउ मनहि बिआपी ।। (पृ ३२८)
माइआ ममता पवहि खिआली ।।
जम पुरि फासहिगा जम जाली ।। (पृ ९९३)

पापी हीऐ मै कामु बसाइ ।।
मनु चंचलु या ते गहिओ न जाइ ।। (पृ. ११८६)

माई मनु मेरो बसि नाहि ।।
निस बासुर बिखिअन कउ धावत किहि बिधि रोकउ ताहि ।। (पृ. ६३२)

उदाहरण स्वरूप हमारे भीतर **माया रूपी 'सर्पनी' 'छुपी' रहती है** जो **मौका मिलते ही** 'अनिक भाँति' छल-कपट करके हम पर **घात लगाकर अचानक हमला करती है,** जिससे हम बिलकुल **बेखबर तथा अन्जान होते हैं ।** इसी कारण **इस माया रूप 'सर्पनी' के हमले से बचाव नहीं हो सकता ।**

माइआ बिआपत बहु परकारी ।। (पृ. १८२)
ऐसी ठगउरी पाइ भुलावै मनि सभ कै लागै मीठी ।। (पृ. ६७३)
माई माइआ छलु ।। (पृ. ७१७)
इह ठगवारी बहुतु घर गाले ।। (पृ. १३४७)
कबीर आई मुझहि पहि अनिक करे करि भेस ।। (पृ. १३६४)

इस **'माया रूपी सर्पनी'** को हम दिन-रात अन्तःकरण के पाताल में मलिन ख्यालों के अभ्यास द्वारा **पालते तथा बलवान करते रहते हैं ।** यह हमारी **'स्वंय रचित' तथा 'बलवान' की हुई माया रूपी 'नागिनी' सदैव तैयार होकर हम पर हमला करने के लिए मौका ताड़ती रहती है ।**

पाइ ठगउली सभु जगु जोहिआ ।। (पृ. ३९४)
माइआ होई नागिनी जगति रही लपटाइ ।। (पृ. ५१०)
मोहनी मोहत रहै न होरी ।।
साधिक सिध सगल की पिआरी तुटै न काहू तोरी ।। (पृ. १२१६)

इस 'अन्तःकरण' की गुप्त **शक्तिमान मायिकी 'सर्पनी' की सदीवी 'कुसंगति',अन्य** सभी **प्रकार की कुसंगतियों से ज्यादा घातक तथा खतरनाक है ।**

मारु मारु स्रपनी निरमल जलि पैठी ।।
जिनि त्रिभवणु डसीअले गुर प्रसादि डीठी ।। (पृ. ४८०)

**ऊपरी ख्यालों की 'रंगत' तो कुछ समय उपरान्त या दैवीय संगति करने से हल्की हो सकती है** या मिट सकती है — परन्तु हमारे मन के गहरे तल अथवा **'अन्तःकरण' में धँसी, बसी हुई 'रंगत' तो 'जीवन-रूप' अथवा हमारा 'व्यक्तित्व' ही बन जाती है, जिसे बदलना अति कठिन है ।**

इस प्रकार हम **अन्तःकरण की मलिन 'रंगत' की 'कुसंगति'** दिन रात करते रहते हैं, जिस का **प्रतिबिम्ब' हमारे जीवन के प्रत्येक पक्ष में खुद-ब-खुद प्रकट होता है** तथा हम **विवश होकर** उसी पुरानी रंगत के प्रवाह में बहे जाते हैं।

जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ।।
इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ।। (पृ ६५८)

नाथ कछूअ न जानउ ।।
मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ।। (पृ ७१०)

गोरखनाथ का गुरू मछंदरनाथ, जो योगियों का शिरोमणी था तथा रिद्धियों-सिद्धियों का स्वामी था — परन्तु जब **बाहरी उक्साहट की 'चिंगारी' लगी** तो उस की **अन्तःकरण की 'रंगत' 'छुपे हुए सर्प की भाँति', फुंकारने लगी** तथा वह अधेड़ावस्था में कामी हो गया। जिस कारण गोरखनाथ को **सिर नीचा करना पड़ा**।

गोरखु जोगी जागदा गुरि माछिंद्र धरी सु धरेला। (वा०भा०गु०२६/१७)
गोरख जती सदाइंदा तिसु गुरू घरिबारी। (वा०भा०गु०३८/७)

**बाहर की 'कुसंगति' से तो हम किसी उपाय द्वारा** बच सकते हैं या अलिप्त रह सकते हैं — परन्तु **अन्तःकरण की 'रंगत' की 'कुसंगति' से बचना असम्भव है** क्योकि यह 'रंगत' तो हमारे अंदर **रवि रही परिपूर्ण तथा समायी हुई है**।

बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई ।।
अनिक जतन करि राखीऐ फिरि फिरि लपटाई ।। (पृ ८५५-५६)

देसु छोडि परदेसहि धाइआ ।।
पंच चंडाल नाले लै आइआ ।। (पृ १३४८)

इसी कारण गुरबाणी में **मलिन मायिकी 'संगति' से बचने की ताड़ना की गयी है**।

मेरे मन नाम बिना जो दूजै लागे ते साकत नर जमि घुटीऐ ।।
ते साकत चोर जिना नामु विसारिआ
मन तिन कै निकटि न भिटीऐ ।। (पृ १७०)

साकत संगु न कीजई पिआरे जे का पारि वसाइ ।।
जिसु मिलिऐ हरि विसरै पिआरे
सो मुहि कालै उठि जाइ ।। (पृ ६४१)
साकत सिउ मुख जोरीऐ अध वीचहु टूटै ।। (पृ ८११)

कबीर मारी मरउ कुसंग की केले निकटि जु बेरि ।।
उह झूलै उह चीरीऐ साकत संगु न हेरि ।। (पृ १३६९)
साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ।। (पृ १३६९)

इस के ठीक **विपरीत यदि किसी का** अन्तःकरण पूर्व जन्म की भक्ति अथवा साधना के कारण निर्मल, ऊच्च, पवित्र, **दैवीय हो** — परन्तु वर्तमान **'कुसंगति' के प्रभाव अधीन** अस्थायी रूप से दुराचारी, ठग, चोर, डाकू भी बन जाये, तो भी किसी उत्तम पवित्र **जीवन वाले गुरमुख की संगति से 'अन्तःकरण' की दैवीय 'रंगत' पुन जाग उठती है,** जो मलिन कर्मों से **रोकती है** तथा **ताड़ना देती है** अथवा **उत्तम दैवीय जीवन की ओर प्रेरणा करती है ।**

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ।।
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ।। (पृ २०४)

इसी कारण इतिहास में अनगिनत कथाएं हैं कि बड़े-बड़े चोर, डाकू, दुराचारी भी **उत्तम दैवीय संगति द्वारा शीघ्र ही 'उलट' कर** उत्तम पुरुष या **गुरमुख बन गये,** जैसे कि — भूमिया चोर, सज्जन ठग, बाल्मीकी डाकू आदि ।

गुरमुखि होवै सु पलटिआ हरि राती साजि सीगारि ।। (पृ ७८५)

इन सभी भक्तों की पिछले जन्मों की आत्मिक कमाई द्वारा इन के **अन्तःकरण निर्मल तथा दैवीय थे** — जिसने उन के नये जन्म में **उन की गिरावट के समय सहायक होकर उन्हें बचा लिया तथा पुनःदैवीय जीवन प्रदान हुआ ।**

इसी लिए हमें उत्तम पवित्र दैवीय 'संगति' करने की प्रेरणा की गयी है ।

भाई रे संत जना की रेणु ।।
संत सभा गुरु पाईऐ मुकति पदारथु धेणु ।। (पृ १८)
खोजि लहउ हरि संत जना संगु समिथ पुरख मिलाए ।।
नानक तिन मिलिआ सुरिजनु सुखदाता से वडभागी माए ।। (पृ २४९)
साध कै सगि न बिरथा जावै ।। (पृ २७२)

उपरोक्त विचार से यह **निष्कर्ष निकलता है** कि हमें अपने ख्यालों का **निरीक्षण करने तथा परखने की अति आवश्यकता है ।**

इस निर्णय के बिना हम सहज-स्वभाव **विवश हो कर तुच्छ मलिन ख्यालों को बार-बार दुहरा कर अथवा 'कुसंगति' करके 'अन्तःकरण' को और मलिन करते जाते हैं ।** इसी अन्तःकरण की **मलिन 'रंगत' के कारण** इस जन्म में **तुच्छ जीवन व्यतीत करते हैं** तथा **अगले जन्मों में भी 'नरकमय जीवन' का साधन जुटाते हैं ।**

किरत के बाधे पाप कमावहि ।। (पृ १०२९)

किरतु ओन्हा का मिटसि नाहि ।।

ओइ अपणा बीजिआ आपि खाहि ।। (पृ ११८३)

इस के विपरीत **उत्तम पवित्र दैवीय भावनाओं वाले ख्यालों की 'संगति' करने से** हमारा अन्तःकरण शुद्ध, निर्मल, दैवीय होता जाता है, जिसके फलस्वरूप **ऊपरी मलिन कुसंगति का प्रभाव हमारे मन के ऊपर से ही होकर गुजर जाता है ।**

कबीर संतु न छाडै संतई जउ कोटिक मिलहि असंत ।।

मलिआगरु भुयंगम बेढिओ त सीतलता न तजंत ।। (पृ १३७३)

जिस प्रकार 'कम्प्यूटर' (computer) में डाले आँकड़ो (data) के अनुसार अन्तिम परिणाम (final result) निकलना अनिवार्य है — इसी प्रकार **अन्तःकरण के 'कम्प्यूटर' में डाले अच्छे-बुरे ख्यालों की 'रंगत' का परिणाम निकलना अनिवार्य है ।**

जितु लागो मनु बासना अति साई प्रगटानी ।। (पृ २४२)

जिस प्रकार मिट्टी के बर्तन में आचार लम्बे समय तक रखा जाये, तो उस आचार की **'गन्ध' उस बर्तन के कण-कण में 'समा' जाती है** । बर्तन को खाली करने तथा भली प्रकार साफ करने के पश्चात भी उस आचार की **'गन्ध' बर्तन में से नहीं निकलती** अपितु उस बर्तन के यदि टुकड़े-टुकड़े भी हो जायें, तब भी **प्रत्येक कण में से उस आचार की 'गन्ध' प्रकट होती है ।**

जो पावहि भांडे विचि वसतु सा निकलै

किआ कोई करे वेचारा ।। (पृ ४४९-५०)

जिस प्रकार बर्तन में हम अपनी इच्छा से वस्तु डालते हैं। उसी प्रकार अन्तःकरण में ख्यालों द्वारा **अच्छी या बुरी रंगत डालनी भी हमारी इच्छा पर निर्भर हैं ।**

इसलिए हम **'अन्तःकरण' की रंगत के विषय में किसी ओर को दोषी नहीं ठहरा सकते, यह जीव के अपने ही कर्म-क्रिया तथा ख्यालों पर निर्भर है ।**

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ ।।

जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ ४३३)

जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ ।। (पृ ४७४)

(क्रमश.....)